REG. NO. RAJHIN /2002/14707

उत्तमा वृत्तिस्तु कृषिकर्मैव

चोखी खेती

अगस्त 2024

मशरुम उत्पादन : एक परिचय

डॉ. मुकेश कुमार शेषमा[1], डॉ. दाताराम कुम्हार[2], डॉ. अशोक कुमार[3], डॉ. अर्जुन लाल यादव[4]

मशरुम एक विशेष प्रकार के जैव वर्ग से संबंध रखते हैं, जिन्हें फंफूद के नाम से जाना जाता है। इनमें पौधों के समान हरित पदार्थ (कॅलोरोफिल) नहीं होता और यह जैव पदार्थ व इन के अवशेषों पर उगते हैं। इन पदार्थों से यह अपना भोजन कवक जाल, जो पदार्थ के अन्दर तक भेद जाते हैं, द्वारा सोखते हैं। यह कवक जाल अधिकतर पदार्थों की ऊपरी सतह पर नजर नहीं आते। काफी भोजन सोखने तथा बढ़ने के बाद कवक जाल उत्पत्ति करने वाले अंगों को बनाती है। जो पदार्थ की सतह पर आकर खुम्ब की उत्पत्ति करती है। हमारे देश मे मुख्य रूप से तीन प्रकार के मशरुम के खेती की जाती है – बटन, ऑयस्टर एवं मिल्की मशरुम, चीन में लगभग 60 प्रकार के मशरुम के किस्मों की खेती होती है और यह देश विश्व का लगभग 87 प्रतिशत मशरुम पैदा करताहै। वर्तमान में भारत में मशरुम की पैदावार 1,30,000 टन प्रतिवर्ष है। इसमें 80 प्रतिशत भाग बटन मशरुम का है तथा शेष अन्य मशरुम का उत्पादन है। मशरुम की खपत विश्व में 2–3 कि. ग्रा., चीन में 10–12 कि.ग्रा. जबकि भारत में यह मात्र 40–50 ग्रा. प्रति व्यक्ति प्रतिदिन है। राजस्थान मे सबसे पहले महाराणा प्रताप कृषि विश्व–विद्यालय मे मशरुम का उत्पादन शुरू हुआ। हाल ही में जारी राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड के नवीनतम आँकड़ों के अनुसार बिहार वर्ष 2021–22 में 28,000 टन से ज्यादा मशरूम उत्पादन कर देश में सबसे बड़ा मशरूम उत्पादक राज्य बन गया है। मशरुम पोषक तत्वों की खान है जिसमें अनेक कार्बोहाइड्रेटस, प्रोटीन, वसा, विटामिन, प्रति–ऑक्सीकारक के अलावा सेलेनियम, कॉपर, पोटैशियम प्रचुर मात्रा में तथा लौह, मगनीशियम, जिंक व मैगनीज कम मात्रा में पाया जाता है। यह कम ऊर्जा का स्रोत है जिसमें पानी (90 प्रतिशत), शुष्क अवयन (10 प्रतिशत), वसा (0.6 प्रतिशत), प्रोटीन (2.5–3.0 प्रतिशत), कार्बोहाइड्रेटस (4–6 प्रतिशत) रेशा (1.0 प्रतिशत) तथा भस्म (1.0 प्रतिशत) पाए, जाते हैं । (प्रति 100 ग्रा.) वर्तमान मे कृषि महाविद्यालय, बीकानेर मे ऑयस्टर, बटन एवं मिल्की मशरुम के स्पान का उत्पादन किया जा रहा है ।

बटन मशरूम

यह मशरुम आज भी स्वदेशी बाजार में सर्वाधिक लोकप्रिय है। विश्व में उत्पादन की दृष्टि से चौथे स्थान पर है जो कि लगभग 15 प्रतिशत है। इसका उत्पादन देश में बड़ी–बड़ी योजनाओं में, मध्यम आकार की इकाईयों तथा मौसमीं इकाईयों में

वरिष्ठ अनुसंधान अध्येयता[1], प्रोफेसर[2], एसोशिएट प्रोफेसर[3], असिस्टेंट प्रोफेसर[4] पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, बीकानेर, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्व–विधालय, बीकानेर

किया जा रहा है। मौसम आधारित मशरूम की खेती भारत के पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, जम्मू व कश्मीर, उत्तराखंड, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश तथा उत्तर पूर्वी राज्यों में जब तापमान 20 डिग्री सेल्सियस से कम हो तो मौसम आधारित खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

(बटन मशरूम उत्पादन)

ऑयस्टर/ढगरी मशरूम

विश्व में यह मशरुम सर्वाधिक लोकप्रिय शीतोष्ण एवं उपोष्ण प्रजाति है और विश्व मशरुम उत्पादन में इसका दूसरा स्थान है। इस मशरूम को साल भर उगाया जा सकता है जहा पर नमी 80–85 प्रतिशत के आसपास हो ओर तापमान 20–25 डिग्री सी० हो ।

मटकों में ऑयस्टर/ढिगरी मशरूम की खेती की प्रक्रिया

इस तकनीक में उत्पादन लेने के लिए एक पुराना मटका लेकर उसमें निश्चित दूरी में ड्रिल से 15 से 20 छेद किए जाते हैं इसके बाद दो से ढाई किलो तूड़ी गीली करके इसमें मशरूम का 100 ग्राम बीज मिलाया जाता है । इसके बाद इस मिश्रण को मटके में भर दिया जाता है और मटके का मुंह कपड़े या प्लास्टिक से बंद कर दिया जाता है । उन्होंने बताया कि 8 से 10 दिन के बाद मशरूम उगना शुरू हो जाता है और मटके के छेदों से बाहर निकलने लगता है । मशरूम बाहर निकलने के ठीक 3 से 4 दिन बाद यह कटाई के लिए तैयार हो जाता है. वैज्ञानिकों के अनुसार मटके के अंदर ऑयस्टर मशरूम (Oyster Mushroom) यानी ढिंगरी को आसानी से उगाया जा सकता है, जो एक सस्ता और आसान विकल्प है । किसान भी इसे आसानी से उगा सकते हैं ।

(ऑयस्टर/ढगरी मशरूम उत्पादन)

मिल्की मशरूम

यह उष्णक्षेत्रों में उगाने के लिए मशरुम की एक नई प्रजाति है। तमिलनाडु, आध्रप्रदेश व कर्नाटक राज्यों में इस मशरुम की खेती बहुत लोकप्रिय है। इसका रंग आकर्षण दुधिया सफेद व भण्डारण पर गुणवत्ता का बना रहना इसके मुख्य गुण है। यह कई प्रकार की कृषि व्यर्थ पदार्थों पर 28–35 डिग्री सेल्सियस तापमान पर आसानी से उग जाती है। यह मशरुम अचार व चटनी बनाने के लिय, उत्तम है।

(मिल्की मशरूम उत्पादन)

लाभ : लागत अनुपात

एक किलोग्राम बटन मशरुम उत्पादन लागत दर लगभग रु 60 – 65 तक होती है । तथा बाजार मे यह 250–300 किलोग्राम के भाव से बिक जाती है ।

एक किलोग्राम ओयस्टर/ढींगरी मशरुम उत्पादन लागत दर लगभग रु 50 – 55 तक होती है । तथा बाजार मे यह 100–150 किलोग्राम के भाव से बिक जाती है ।

एक किलोग्राम मिल्की मशरुम उत्पादन लागत दर लगभग रु 40 – 50 तक होती है । तथा बाजार मे यह 80–100 किलोग्राम के भाव से बिक जाती है ।

खरीफ की फसलों में खरपतवार प्रबंधन

डॉ. पार्वती दीवान[1], डॉ. सुरेंद्र सिंह[2], डॉ. राजहंस वर्मा[3], डॉ. सुशीला ऐचरा[1] एवं डॉ.. डी. के. बैरवा[1]

कृषि के प्रारंभ काल से ही फसलों के साथ कुछ अनचाहे पौधे उगते आये है जो फसलोत्पादन को कम करते है तथा कृषि कार्यो में बाधा उत्पन्न करते है. बिना बोये खेतों में उगने वाले अवांक्षित पौधों को खरपतवार कहते है। खरपतवार प्रकोप और परिस्थितियों के आधार पर अनियंत्रित खरपतवारों से फसलों की पैदावार में 5 से 85 प्रतिशत तक हानि हो सकती है। दरअसल खरपतवार फसलों के लिए भूमि में उपलब्ध आवश्यक पोषक तत्व एवं नमीं का बड़ा हिस्सा अवशोषित कर लेते है तथा साथ ही साथ फसल के लिए आवश्यक प्रकाश एवं स्थान से भी वंचित कर देते है ।

जिससे पौधों का विकास, उत्पादन क्षमता और गुणवत्ता घट जाती है. खरपतवार प्रबंधन में हमेशा यह बात ध्यान में रखी जानी चाहिए कि फसल को हमेशा न तो खरपतवार मुक्त रखा जा सकता है और न ही ऐसा करना आर्थिक दृष्टि से लाभकारी होता है। अधिकतम उपज के लिए फसल–खरपतवार प्रतिस्पर्धा की क्रांतिक अवधि अर्थात नाजुक समय में फसल को खरपतवारों से मुक्त रखा जाना आवश्यक है। खरपतवार–फसल प्रतिस्पर्धा की क्रांतिक अवस्था से तात्पर्य फसल जीवन चक्र के उस समय से है जब खरपतवार नियंत्रण से अधिक शुद्ध आर्थिक लाभ प्राप्त होता हो तथा खरपतवार नियंत्रण न करने पर उपज एवं लाभ में सबसे अधिक कमीं होती अधिकाँश फसलों में यह समयावधि बुवाई के लगभग 30–40 दिन तक रहती है. इस समय फसल को खरपतवार रहित रखना नितान्त आवश्यक है। खरीफ की प्रमुख फसलों में खरपतवार–फसल

प्रतियोगिता का क्रांतिक समय

फसल	क्रांतिक अवधि (बुवाई के बाद दिन)
बाजरा	30–45
कपास	15–60
अरहर	15–60
मूँग	15–45
कपास	15–60

खरीफ फसलो मे पाये जाने वाले मुख्य खरपतवार किसी स्थान पर खरपतवारों की उपस्थिति वहाँ की जलवायु, भूमि, संरचना, भूमि में नमी की मात्रा, खेतों में बोई गई पिछली फसल आदि पर निर्भर करती है। इसलिये एक ही फसल में अलग–अलग स्थानो पर अलग–अलग प्रकार के खरपतवार पाये जाते हैं।

खरीफ की फसलों में मुख्यतः तीन प्रकार के खरपतवार पाये जाते हैं:

1. **घास जाति के खरपतवारः** घास वर्ग के खरपतवारों की पत्तियाँ पतली और लंबी होती हैं तथा इन पत्तियों के अन्दर समानान्तर धारिया पाई जाती हैं। ये एक बीजीय पौधे होते हैं जैसे सांवा (इकाइनोक्लोवा कोलोनम या इकाइनोक्लोवा क्रुसगेली), कोदों (इल्यूसिन इंडिका), मकरा (डैक्टाइलोक्टेनियम इजिप्टियम), दूब (साइनोडोन डैक्टाइलोन), वनचरी (सोरगम हैलीपैन्स) तथा गिनिया घास (पानिकम डिकोटोमाईफलोरम)।
2. **चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारः** इस प्रकार के खरपतवारों की पत्तियाँ प्रायः चौड़ी होती हैं व ये अधिकतर दो बीज पत्रीय पौधे होते हैं। साठी (द्रायन्थेमा पोर्टुलाकास्ट्रम), कनकवा (कोमेलिना बैंगालेंसिस), कोन्दरा (डाइजेरा अर्वेन्सिस), भांग (कैनाबिस सटाइवा), चौलाई (अमरेन्थस स्पाइनोसस), मकोय (सोलेनम नाइग्रम), बड़ी दूधी (यूफोर्बिया डिफ्यूजा) और गाजर घास (पार्थीनियम हिस्टेरोफोरस)।
3. **मोथा कुल खरपतवारः** इस समूह के खरपतवारो की पत्तियाँ लम्बी तथा तना किनारे वाला ठोस होता है। जड़ों मे गाँठे (राइजोम) पाये जाते हे। जो जड़ों में भोजन को इकट्ठा करके नये पौधों को जन्म देने में सहायता करते हैं जैसे मौथा (साइप्रस इरिया, साइप्रस रोटेडं स, साइप्रस डिफोरमिस आदि।

खरपतवार प्रबन्धन की विधियाँः

खरपतवारों का नियंत्रण भौतिक व यांत्रिक विधियों से किया जा सकता है। परन्तु इन विधियों में समय,श्रम और पूँजी अधिक लगती है जिससे खेती की लागत बढ़ जाती है। शाकनाशी रसायनों द्वारा खरपतवारों को सफलतापूर्वक नियंत्रित किया जा सकता है। इससे प्रति हेक्टेयर लागत कम आती है तथा समय की बचत होती है। लेकिन इन रसायनों का प्रयोग करते समय सावधानी बरतनी पड़ती है. खरपतवार नियंत्रण में शाकनाशी रसायनों के उपयोग में एक और विशेष लाभ है। हाथ से निदाई या डोरा (वीडर) चलाकर निदाई, फसल की कुछ बढ़वार हो जाने पर की जाती है और इन सस्य क्रियाओं में खरपतवार जड़ मूल से समाप्त होने की बजाय, ऊपर से टूट जाते है, जो बाद में फिर वृद्धि करने लगते है. शाकनाशी रसायनों में यह स्थिति नहीं बनती क्योंकि यह फसल बोने के पूर्व या बुवाई के बाद उपयोग किये जाते है जिससे खरपतवार अंकुरण अवस्था में हो समाप्त हो जाते है अथवा बाद में शाकनाशी के प्रभाव से पूर्णतया नष्ट हो जाते है. खेती में लागत कम करने के लिए रासायनिक विधि से खरपतवार नियंत्रण एक कारगर उपाय है इसमें समय श्रम और पैसे की बचत होती है।

रसायनो द्वारा खरपतवार नियंत्रणः शाकनाशी खरपतवार की वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं या उनको नश्ट कर देते हैं। यदि इन रसायनों को उचित मात्रा एवं समय पर प्रयोग किया जाए तो फसलों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता। शाकनाशी रसायनो का क्षेत्रफल के हिसाब से निर्धारित निश्चित मात्रा एवं उचित समय पर प्रयोग करने से फसल को नुकसान नहीं होगा। ज्यादा मात्रा में प्रयोग करने से फसल को नुकसान हो सकता है तथा शाकनाशी रसायनों के अवशेश रह सकते हैं जबकि कम मात्रा मे डालने से खरपतवारो का सही नियंत्रण नहीं हो पाता है। शाकनाशी रसायनों से प्रभावी खरपतवार नियंत्रण के लिए इनका उपयोग बिल्कुल सही समय पर

1. सहायक आचार्य (कृषि महविद्यालय कोटपूतली), 2. आचार्य (कृषि महविद्यालय कोटपूतली), 3. सहायक आचार्य (श्री करण नरेंद्र कृषि महविद्यालय जोबनेर) (श्री करण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर) राजस्थान

एवं समान रूप से छिडक कर होना चाहिए।

शाकनाशियों रसायनो ं का वर्गीकरण:

शाकनाशियों रसायनों का वर्गीकरण निम्नलिखित रूपो में किया जा सकता है:

1. बुवाई से पहले
2. बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व
3. अंकुरण के बाद

1.बुवाई से पहले प्रयोग (Pre-plant Application)-

सक्रिय शाकनाशियों का बुवाई से 2–10 दिन पहले मिट्टी में प्रयोग करने को बुवाई पूर्व प्रयोग कहते है. इस प्रकार का प्रयोग उस समय किया जाता है जब शाकनाशी रसायन फसल के पौधों के लिए घातक हो. वाष्पशील (volatile) शाकनाशी जैसे फ्ल्युक्लोरालिन, ट्राईफ्ल्युरालिन का वाष्पीकरण रोकने के लिए इन्हें मिट्टी में मिला दिया जाता है.फसल लगने के बाद इन्हें मिट्टी में सुचारू रूप से नहीं मिलाया जा सकता है, इसलिए बोने के पहले इन्हें मिट्टी में मिलाया जाता है. सोयाबीन में फ्ल्युक्लोरालिन व ट्राईफ्ल्युरालिन का अंकुरण के समय प्रयोग करने की अपेक्षा बुवाई से पहले प्रयोग करना अधिक प्रभावी होता है. बुवाई से पहले इन शाकनाशियो को मिट्टी में अच्छी तरह मिलाया जा सकता है और इस समय इनकी अधिक मात्रा का भी प्रयोग सुरक्षित रहता है.

2.अंकुरण के पहले प्रयोग (Pre-emergence Application) –

फसल की बुवाई के बाद एवं फसल व खरपतवार के अंकुरण से पूर्व शाकनाशी के प्रयोग को अंकुरण पूर्व प्रयोग कहते है. शाकनाशियों का प्रयोग बुवाई से 1–4 दिन बाद परन्तु अंकुरण से पहले किया जाता है. शाकनाशी के प्रयोग से खरपतवार के अंकुरित होने वाले बीज मर जाते है और फसल पर इनका दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है. उदाहरण के लिए एट्राजीन, एलाक्लोर, पेंडीमेथालिन, ऑक्सीफ्लोरफेन आदि का प्रयोग अंकुरण के पहले किया जाता है.

3.अंकुरण के बाद प्रयोग (Post-emergence Application) –

फसल के अंकुरण के बाद शाकनाशी प्रयोग करने को अंकुरण के बाद प्रयोग कहते है. बुवाई के बाद प्रयोग तभी किया जाता है जब फसल के पौधे इतने बड़े हो जाय कि वे शाकनाशी दवा सहन कर सकें. गेंहू में 2,4–डी सोडियम साल्ट का प्रयोग बुवाई के 28–35 दिन बाद करने पर चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार नष्ट हो जाते है

शाकनाशियों रसायनो ं का चुनाव:

आजकल बाजार में अनेक तरह के शाकनाशी रसायन उपलब्ध हैं लेकिन इन रसायनों का चुनाव खरपतवारों के प्रकार एवं उपयोग के समय के आधार पर किया जाता है। यहां पर ध्यान देने योग्य बात यह है कि एक ही शाकनाशियों रसायन के प्रयोग से सभी प्रकार के खरपतवारों को नश्ट नहीं किया जा सकता, इसलिए प्रभावी नियंत्रण के लिए दो या इससे अधिक रसायनो ं को मिलाकर छिडक् ाव करना चाहिए। यदि यह रसायन संगत नहीं है तो एक रसायन के प्रयोग के कुछ दिन बाद दूसरे का प्रयोग करना चाहिए। कुछ तैयार मिश्रित रसायन बाजार मे ं उपलब्ध हैं जैसे अलमिक्स (क्लोरीम्यूरान + मेटसल्फ्यूरान) वेलोर (पैन्डीमैथेलीन + इमीजाथापायर) इत्यादि। मिलवां या अनतर्वर्ती फसलों में ऐसे शाकनाशियों रसायनों का चुनाव करना चाहिए जो सभी फसलों में सुरक्षित हो। उदाहरण के लिए मक्का, दलहनी फसल में एलोक्लोर, पेन्डीमैथेलिन, का छिड़काव करना चाहिए। शाकनाशी रसायनों का चुनाव बाजार में उनकी उपलबधता एवं कीमत पर भी निर्भर करता है।

शाकनाशियो ं रसायनो ं की कार्यक्षमता बढ़ाने के उपाय:

- शाकनाशियों रसायनो ं का प्रयोग सिफारिश की गई मात्रा एवं समय पर ही करें।
- हल्की भूमियो ं में रसायनों की कम मात्रा एव ं भारी भूमि में अधिक मात्रा का प्रयोग करे। रसायन के प्रयोग के समय खेत में पर्याप्त नमी होना आवश्यक है।
- शाकनाशियों रसायन की कम मात्रा के साथ एक निराई–गुडाई, रसायन की अधिक मात्रा के प्रयोग की तुलना में अधिक प्रभावी एवं कम खर्चीली होती है।
- कुछ शाकनाशियों रसायनों की कार्य क्षमता, पृश्ठीय सक्रिय तत्व जैसे टी–पोल या सिलवेट द्वारा बढ़ाई जा सकती है। तथा पहले अच्छी तरह पानी से साफ कर ले।

सारणी 1: विभिन्न फसलों में शाकनाशी रसायनों के प्रयोग की सिफारिश की गई मात्रा एवं प्रयोग का समय:

क्र. सं.	रसायन का नाम	मात्रा (ग्राम सक्रिय तत्व/है.)	प्रयोग का समय	टिप्पणी
ज्वार /बाजरा				
1	पेन्डीमिथेलिन	750–1000	बुवाई के 2–3 दिन के अन्दर	वार्षिक घास जाति एवं कुछ चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की रोकथाम में उपयुक्त। दलहन के साथ मिलवां फसल में भी प्रयोग कर सकते हैं। प्रयोग के तुरंत बाद एवं पहले वर्षा होने की संभावना नहीं होनी चाहिए और मिट्टी में नमी होनी चाहिए।
2	एट्राजिन	500	बुवाई के 1–2 दिन में	सभी प्रकार के खरपतवारों के लिए प्रभावी। ज्वार के साथ दलहन/तिलहन की मिलवां फसल में प्रयोग न करें।
3	2,4–डी सोडियम लवण	500	बुवाई के 25–30 दिन के बाद	चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों की रोकथाम के लिए उपयुक्त।
कपास				
1	डाईयूरोन 80 डब्लयू. पी.	750	बुवाई के 0 से 5 दिन के अन्दर	चौड़ी पत्ती कुल के खरपतवार
2	क्यूजालोफोपइथाइल 84 डब्लयू. जी.	50	बुवाई के 15–20 दिन बाद	एक वर्षीय घास कुल के खरपतवारों के नियंत्रण के लिए
3	ग्लुफोसिनेट अमोनियम 13.5 प्रतिशत एस एल	375–450	बुवाई के 15–20 दिन बाद स्प्रेयर मशीने के हुड लगा निर्देशित छिड़काव कपास के पौधों को बचाते हुए	सभी प्रकार के संकड़ी एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों पर प्रभावी नियंत्रण
मूंगफली				
1	डिक्लोसुलम 84% WDG	22–26	बुवाई के तुरन्त बाद	घासकुल एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों पर नियंत्रण
2	इमाजेथापायर 10 ई. सी. सर्फेक्टेंट्स	100–150	बुवाई के तुरन्त बाद या 7 से 14 दिन बाद	एक वर्षीय घासकुल एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए
3	ऑक्सीफ्लोरफेन 23.5 प्रतिशत ई.सी.	150–250	बुवाई के तुरन्त बाद या 2–3 दिन के अन्दर उचित नमी की अवस्था में	एक वर्षीय घासकुल चौड़ी पत्ती एवं मोथा वर्गीय
4	पेन्डीमिथिलीन 30 ई. सी.	750–1000	बुवाई के तुरन्त बाद या 2–3 दिन के अन्दर उचित नमी की अवस्था में	घासकुल के खरपतवारों के नियंत्रण के लिए
5	क्यूजालोफोप इथाइल 5 ई.सी.	40–50	बुवाई के 15–20 दिन बाद	एक वर्षीय एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए
6	इमाजेथापायर + पेन्डीमिथिलीन 32 ई. सी.	1000	बुवाई के तुरन्त बाद या 2–3 दिन के अन्दर उचित नमी की अवस्था में	एक वर्षीय एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों के नियंत्रण के लिए
7	इमाजेथापायर 30 प्रतिशत + इमाजामोक्स 2 प्रतिशत	70 एमएसओ सहायक 2 मि. ली. प्रति लीटर पानी	बुवाई के 15–20 दिन बाद	सभी प्रकार के संकड़ी एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों पर प्रभावी नियंत्रण

फसलों में सूक्ष्म पोषक तत्वों का महत्त्व

ममता[1], नारायण राम गुर्जर[2] एवं डॉ. रोशन चौधरी[3]

परिचय

कोई भी पौधा अपना जीवनचक्र बिना पोषक तत्वों के पूर्ण नहीं कर सकता क्योंकि सभी पौधों को बढ़वार और विकास के लिये कम से कम 17 तत्वों की आवश्यकता होती है। इनमें से कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन पानी तथा हवा से प्राप्त होते हैं । अन्य 14 तत्व भूमि, उर्वरक तथा खादों से मिलते हैं। पौधों के सूक्ष्म तत्व, वे तत्व होते हैं, जिनको पौधे सूक्ष्म मात्रा में ग्रहण करते हैं। जैसे. बोरोन, आयरन, मैंगनीज, कापर, जिंक, मोलिब्डेनम, क्लोरीन एवं निकिल । रासायनिक उर्वरक, मृदा में पोषक तत्वों के मुख्य स्रोत होते हैं। भारत में खाद्यान्न उत्पादन के साथ सूक्ष्म तत्वीय उर्वरकों का प्रयोग भी लगातार बढ़ रहा है। कई वैज्ञानिको द्वारा किये गये अनुसंधानों के अनुसार भारतीय मृदाओं में जिंक, आयरन, मैग्नीज, तांबा, बोरॉन तथा मोलिब्डेनम की क्रमशः 49, 12, 4, 3, 33 और 12 प्रतिशत कमी है तथा इन सूक्ष्म पोषक तत्वों की मृदाओं में कमी लगातार बढ़ती जा रही है। इन तत्वों में भी जस्ते की सर्वाधिक कम मात्रा भारतीय मृदाओं में देखी गई है। भारतीय मृदाओं में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी का कारण विभिन्न मृदाओं में लगातार हो रही सघन कृषि तथा संकर किस्मों का प्रवेश है। इस प्रकार निरंतर सूक्ष्म तत्वों का निष्कासन हो रहा है, जिसमें विशेषकर खाद्यान्न फसलों द्वारा उर्वरक उपयोग कर अधिक मात्रा में जैव पदार्थ उत्पादित करना शामिल है।

वर्तमान कृषि में पोषक तत्वों रहित सकेंद्रित प्रयोगशाला में मृदा एवं पौधे में मौजूद सूक्ष्म पोषक तत्वों का परीक्षण किया जाता है तथा जिन तत्वों की कमी होती है उन्हीं तत्वों को खाद एवं उर्वरकों के माध्यम से मृदा में उपलब्ध करवाकर उनकी उपयोगिता को बढ़ाया जा सकता है। साथ ही उपयुक्त मात्रा में उपस्थित पोषक तत्वों को डालकर मृदा स्वास्थ्य का उचित प्रबंधन किया जा सकता है। एक अनुमान के अनुसार जस्ते की कुल खपत का 70 प्रतिशत खाद्यान्न फसलों तथा 30 प्रतिशत फल एवं सब्जी उत्पादन में हो रहा है। कुल बोरॉन का लगभग 60 प्रतिशत प्रयोग फल तथा सब्जी वाली फसलों में होता है और 40 प्रतिशत का प्रयोग खाद्यान्नों व तिलहनी उत्पादन में होता है।

सूक्ष्म पोषक तत्व

लौह (Fe), मैंगनीज (Mn) जस्ता (Zn), तांबा (Cu), बोरॉन (B), मोलिब्डिनम (Mo), क्लोरीन (Cl), निकिल (Ni) आदि सूक्ष्म पोषक तत्व हैं जिनकी पौधे को अपेक्षाकृत कम मात्रा में आवश्यकता होती है। इसलिए इन्हें सूक्ष्म पोषक तत्व या गौण तत्व कहा जाता है ये भी मुख्य पोषक तत्वों की तरह ही आवश्यक होते हैं। पौधे द्वारा इन सूक्ष्म पोषक तत्वों का उपयोग विभिन्न एंजाइमों के संश्लेषण में होता है एवं इनकी न्यूनता एवं अधिकता पौधे की वृद्धि एवं विकास पर विपरित प्रभाव डालती है। मृदा स्वास्थ्य एवं इसकी उत्पादकता को बनाए रखने एवं सुधारने के लिए पोषक तत्वों के जैविक स्रोत के साथ रासायनिक उर्वरक मिश्रित करके इनके संतुलित एवं विवेकपूर्ण उपयोग करने की आवश्यकता है।

सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता

सूक्ष्म पोषक तत्व ऐसे रासायनिक तत्व हैं जिनकी पौधे को जीवित रहने एवं वृद्धि के लिए अत्यंत आवश्यकता होती है। पौधे की उपापचयी क्रियाओं तथा प्रकाश संश्लेषण में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। क्षतिग्रस्त ऊतकों की मरम्मत तथा शारीरिक क्रियाओं के नियंत्रण व ऊर्जा के उपयोग करने में भी सहायक होते हैं। पादप पोषक तत्व अकार्बनिक यौगिक हैं जिन्हें पौधे मृदा एवं अपने वातावरण से ग्रहण करते हैं

पौधौ में सूक्ष्म पोषक तत्वों की भूमिका एवं कमी के लक्षण

प्रत्येक पोषक तत्व को पौधे के अन्दर कुछ विशेष कार्य करने होते हैं। एक पोषक तत्व दूसरे का कार्य नहीं कर सकता। किसी एक तत्व की सान्द्रता जब निश्चित क्रान्तिक स्तर से नीचे आ जाती है तो पौधे में उस तत्व की कमी हो जाती है। इससे पौधे की जीवन क्रिया में बाधा पड़ती है तथा उसके विभिन्न अंगों, खासकर पत्तियों पर तत्व विशेष की कमी के लक्षण दिखाई देने लगते हैं।

जस्ता

जस्ते की आवश्यकता पौधे में इंडोल एसिटिक अम्ल के निर्माण के लिये अनिवार्य है । यह पौधे में विभिन्न धात्विक एंजाइमों का मुख्य घटक है। यह पौधे की विभिन्न उपपाचक क्रियाओं के लिये आवश्यक है। एंजाइम कार्बनिक एनहाइड्रेज मुख्य रूप से जस्ते द्वारा ही उत्प्रेरित होता है । जस्ता, राइबोन्यूक्लिक अम्ल, प्रोटिन संश्लेषण तथा जल अवशोषण में भाग लेता है

कमी के लक्षण

जस्ते की कमी के लक्षण नई पत्तियों में अन्तःशिरीय पर्ण हरिमाहीनता के रूप में दिखाई देते हैं साथ ही शिराओं से लगा भाग हरा ही रहता है। पत्तियां छोटी तथा पत्तियां मुड़ जाती है । सब्जी वाली फसलों में नई पत्तियों के रंग में परिर्वतन असामान्य रूप से दिखाई पड़ता है। पत्तियां छोटी तथा चित्तीदार असाधरण मुड़ी हुई व रंगीन हो जाती है। नीम्बू वर्गीय पौधे में असामान्य अतः शिरीय पर्ण हरिमाहीनता दिखाई देती है साथ ही पत्तियां छोटी, नुकीली और मुड़ी होती हैं। फलों का बनना बहुत कम हो जाता है। दलहनी फसलों में पत्तियों में अतः शिरीय पर्ण हरिमाहीनता दिखाई देती है। इसके अलावा क्लोरोटिक धब्बों से मृत पत्तियां झड़ जाती है

जस्ते का प्रबंध

जस्ते के विभिन्न अकार्बनिक स्रोतों में जिंक सल्फेट हेप्टाहाइड्रेट ($ZnSO_4.7H_2O$)

1. वद्यावाचस्पति, शस्य विज्ञान विभाग राजस्थान कृषि महाविद्यालय, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय,उदयपुर 3130012 2.कृषि अधिकारी 3.उपनिदेशक अनुसंधान, अनुसंधान निदेशालय शस्य विज्ञान विभाग श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर ईमेल Mamta442255@gmail-com

जिसमें 20–21 प्रतिशत जस्ता की मात्रा होती है सर्वश्रेष्ठ स्रोत है। यह आसानी से उपलब्ध होने वाला व सबसे सस्ता स्रोत है और इससे जस्ते की कमी की पूर्ति आसानी से हो सकती है। यह जल में तीव्र घुलनशील होता है। मोनोहाइड्रेट जिंक सल्फेट 33 प्रतिशत दोनों ही समान रूप से जिंक की कमी वाली मृदाओं में प्रयोग हेतु उपयुक्त है। इनका प्रयोग मृदा में तथा पौधे पर छिड़काव के माध्यम से किया जा सकता है। नियमित रूप से मृदा में गोबर की खाद का प्रयोग 10 से 15 टन प्रति हैक्टेयर की दर से किया जाता है । तो सभी सूक्ष्म तत्वों की कमी की पूर्ति हो सकती है। इस प्रकार लम्बे समय तक सामान्य फसल उत्पादन लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। यदि गोबर की खाद पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न हो तब 4 से 5 टन गोबर की खाद के साथ 50 प्रतिशत जस्ते की अनुशांसित मात्रा का प्रयोग कर इसकी पूर्ति कर सकते हैं। जिंक की कमी वाली मृदाओं में सूक्ष्म तत्व युक्त मुख्य तत्वीय उर्वरक जैसे जिंक लेपित यूरिया, जिंक लेपित सुपर और बोरोनेटेड सुपर आदि का प्रयोग किया जा सकता है मृदा में जस्ते की कमी के स्तर के आधर पर उर्वरक की मात्रा बढ़ाई या घटाई जा सकती है। क्षारीय मृदायें जिनमें अधिकतर जस्ते की कमी होती है उनमें धान, गेहूं, बरसीम व अन्य फसलों की अधिकतम उपज प्राप्त नहीं की जा सकती जब तक सोडियम की विषाक्ता को कम नहीं किया जाये। साथ ही जस्ते की कमी के लिए 25 से 75 प्रतिशत सुधार मात्रा पर निर्भर करता है कि सुधार का स्तर कहां तक कम किया जा सकता है। जब जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई दें तब 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव तीन बार 7 से 10 दिन के अंतराल पर करने से कमी को सुधारा जा सकता है । जस्तायुक्त उर्वरकों की उपयोग क्षमता बढ़ाने के लिये मृदाओं में प्रयोग के साथ कार्बनिक खादों का प्रयोग करना चाहिए । गोबर की खाद के साथ जस्ते का प्रयोग, अकेले जस्ते के प्रयोग से अधिक लाभकारी होता है। 5 कि. ग्रा. जस्ता प्रति हैक्टेयर या 4 टन गोबर की खाद के साथ जस्ता 2 से 5 कि. ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

लौह

लौह, पौधे की उपाचय की प्रक्रिया में एंजाइम प्रणाली के लिए आवश्यक है। इन एंजाइमों में केटेलेज, ऑक्सीडेज तथा साइटोक्रोम एंजाइम होते हैं। लौह प्रोटिन फेरोडोक्सीन का भाग है जिसकी आवश्यकता नाइट्रेट तथा सल्फेट के अवरण के लिये आवश्यक है लौह, हरित लवक के बनने व उसके रखरखाव हेतु आवश्यक है। लौह, प्रोटीन की उपापचय की क्रिया में मुख्य सहायक है।

कमी के लक्षण

नई पत्तियों पर अंतःशिरीय क्लोरोसिस दिखाई देता है और सबसे पहले नई पत्तियां सफेद हो जाती है। लौह भी

मैग्नीज के समान पर्ण हरिम उत्पादन में भाग लेता है । लौह की कमी सामान्यतः क्षारीय एवं अधिक चूनायुक्त मृदाओं में देखने को मिलती है

लौह तत्व प्रबंध

फसल उत्पादन के लिए मृदा में लौह तत्व की कमी एक प्रमुख बाधा है। विभिन्न मृदाओं जैसे भारी मृदाओं, क्षारीय मृदाओं व चूना पत्थरयुक्त मोटी संरचना वाली मृदाओं, जिनमें कम कार्बनिक तत्व हों, में इसकी कमी पाई जाती है। पौधे में 1 से 2 प्रतिशत फेरस सल्फेट का बिना उदासीनीकरण वाली विलयन का छिड़काव करने पर आयरन क्लोरोसिस का निदान सफलतापूर्वक किया जा सकता है। धान की पौधें में लौह तत्व की कमी को प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जा सकता है। इसके लिए पडलिंग करते समय लौह तत्व के स्रोत को गोबर की खाद के साथ मृदा में मिलाया जाता है लौह तत्व की कमी धान की फसल हेतु भारी मृदाओं व कोरस संरचना वाली मृदाओं में फेरस आयन (Fe) के कम उपयोग के कारण लौह तत्व की कमी रहती है । हरी खादए गोबर की खाद व कम्पोस्ट का प्रयोग लौह तत्व की पारगम्यता को बढ़ाने में सहायक होता है । जब हरी खाद या गोबर की खाद के साथ फेरस सल्फेट ($FeSO_4.7H_2O$) के बिना उदासीनीकरण किये हुये 1 प्रतिशत के घोल का छिड़काव फसलों पर किया तब वह अधिक लाभकारी होता है।

मैग्नीज

मैग्नीज पौधे की एजाइम प्रणाली की आरम्भिक क्रियाओं में प्रमुख रूप में कार्य करता है उपापचय की प्रक्रिया को उत्प्रेरित करता है। यह पायरोवेट कारबोक्सीलेज के बनने में सहायता करता है तथा क्लोरोफिल बनाने में सहायता कर पौधे में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में होने वाली ऑक्सीकरण अवरण प्रक्रिया में भाग लेता है जब पौधे में एंडोल एसिड का ऑक्सीकरण होता है तब यह इंडोल एसिटिक एसिड ऑक्सीडेज को उत्प्रेरित करता है।

कमी के लक्षण

नई पत्तियों की शिराओं में क्लोरोसिस दिखाई देता है जबकी शिराओं से लगे भाग हरे होते है। बाद में वह सुरमई रंग के हो जाते है अथवा नेक्रोटिक धब्बे बन जाते है। द्विबीजपत्री में पत्तियों पर लौह की कमी के लक्षणों के विपरीत छोटे पीले धब्बे दिखाई देते हैं एवं एक बीज पत्रीय पौधे में हरे चित्ति दार धब्बे पत्तियों के निचले तल पर नई पत्तियों में दिखते हैं । ये धब्बे बाद में पीले व नारंगी हो जाते है। दलहनी पौधे में नेक्रोटिक क्षेत्र का विस्तार बीज पत्रों तक होता है जिन्हें मार्श धब्बे कहते है

मैंगनीज प्रबंध

मृदाओं में मैंगनीज की कमी अधिक हो रही है जो कि गेहूँ धान फसल चक्र में मैंगनीज की कमी से होती है। ऐसा अधिक पारगम्य

कोरस संरचना वाली क्षारीय मृदाओं, जिनमें कार्बनिक तत्वों की कमी होती हैए में होता है। पौधे पर 0.5 से 1.0 प्रतिशत ($MnSO_4$) का छिड़काव 3 से 4 बार करना, मृदा में प्रयोग की अपेक्षा अधिक उपयुक्त होता है साथ ही यह आर्थिक रूप से भी सस्ता है । यह बलुई मृदाओं में गेहूँ से अधिकतम उपज प्राप्त की जा सकती है। गेहूँ की ड्युरम प्रजातियां मैंगनीज की कमी में एस्टीवम प्रजातियों की अपेक्षा अधिक सहनशील पाई गई हैं।

कॉपर

तांबा, पौधे की बहुत सी एंजाइम प्रणालियों का आवश्यक अंग है जो सीधा प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में भाग लेता है। यह क्लोरोप्लास्ट के प्रोटिन प्लास्टोसिसनिन का भाग है जो कि इलेक्ट्रॉन परिवहन प्रणाली में आवश्यक होता है। यह क्लोरोफिल के निर्माण में आवश्यक है साथ ही यह पौधे के अन्य वर्णकों के निर्माण में भी मुख्य भूमिका निभाता है।

कमी के लक्षण

इसकी कमी से पौधे की वृद्धि कम हो जाती है। नई पत्तियां छोटी व विकृत हो जाती है। वृक्षों के वृद्धि स्थानों से अधिक शाखाएं निकलती है जिससे वृक्ष सघन (बुशी) हो जाते है । नई पत्तियां हल्के रंग की हो जाती हैं व बाद में झड़ जाती हैं या अग्र भाग से पीछे की ओर से मृत हो जाती हैं। घास वर्गीय पौधे में नई पत्तियों का अग्रभाग सर्वप्रथम प्रभावित होता है तथा पौधे की वृद्धि रूक जाती हैए जिसमें वे क्लोरिक हो जाते हैं

कॉपर प्रबंध

कॉपर मुख्य रूप से कार्बनिक पदार्थों में पाया जाता हैए इसलिए मिट्टी में खाद मिलाने से पौधों को इसकी उपलब्धता बढ़ाने में मदद मिलेगी। इसके अतिरिक्त, कॉपर सल्फेट या क्यूप्रिक क्लोराइड कॉपर की कमी दूर करने हेतु सामान्य रूप से उपयोग किये जाते हैं।

बोरॉन

बोरॉन, पौधे में नर जननांग के बनने व उनकी वृद्धि के लिये आवश्यक तत्व है। यह क्षार के निर्माण में भी सहायक है । यह जड़ों की वृद्धि को प्रेरित करता है एवं एंजाइमों के बनने, बीज एवं कोशिका भित्ति के निर्माण तथा शर्करा के परिवहन के लिये आवश्यक है।

कमी के लक्षण

बोरॉन की कमी के लक्षण सर्वप्रथम वृद्धि बिन्दुओं और नई पत्तियों पर दिखाई देते हैं। इससे पौधे की वृद्धि रूक जाती है और पत्तियां मोटी और मुड़ी हुई चाबुक के समान हो जाती हैं।

चित्रः गोभी में खोखले तने

बोरॉन प्रबंध

बोरेक्स, ग्रेन्यूबोर तथा बोरिक अम्ल मृदा में बोरॉन की कमी दूर करने हेतु सामान्य रूप से उपयोग किये जाते हैं। मृदा में बोरॉन का प्रयोग पौधे पर छिड़काव की अपेक्षा अधिक उपयोगी है। फसलों में बोरॉन की कमी दूर करने में पर्णीय छिड़काव अधिक लाभप्रद है परन्तु मृदा में प्रयोग की अपेक्षा कम कारगर होता है। बोरॉन तत्व परागकणों व बीजों के बनने में सहायक है। अतः पौधे पर छिड़काव अधिक परागकणों के बनाने में सहायक होता है जिससे यह परागकण की उत्तम सम्भावना व ज्यादा बीज बनने से उपज बढ़ाने में सहायक होता है। बोरेक्स का छिड़काव फूल निकलने से पूर्व करने पर अधिक कलिकाएं व फूल होते हैं तथा अधिक उपज प्राप्त होती है। बोरॉन के प्रयोग की अधिकतम मात्रा लेटरेटिक मृदाओं में 1.0 से 1.5 कि. ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर अनाज वाली फसल में तथा 1. 5 ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से दलहनों एवं तिलहनों में 2.0 कि 3 से 4 बार करने की अनुशंसा की गई है। जिससे बोरॉन प्रयोग का अवशेष प्रभाव भी बाद की फसलों को मिलता है।

क्लोरीन

प्रकाश संश्लेषण की क्रिया के लिये क्लोरीन आवश्यक है तथा यह ऑक्सीजन के प्रतिस्थापक के रूप में कार्य करती है । यह कोशिकाओं में ऑस्मोटिक दाब बढ़ाती है जिससे ऊतकों में जल का अंतर्गमन बढ़ता है। क्लोरीन पौधे को विभिन्न फफूंदीग्रस्त बीमारियों से बचाता है जैसे गेहूँ की टेक आल बीमारी

कमी के लक्षण

नई पत्तियों में क्लोरोसिस होता है साथ ही पौधे मुरझाए हुए दिखाई देते हैं ।

निकिल

यह यूरिएज एंजाइम के लिए आवश्यक है जो कि यूरिया का अपघटन करके नाइट्रोजन को पौधे के लिये उपयोगी स्वरूप प्रदान करता है। निकिल पौधे में लौह तत्व के अवशोषण में सहायक है यह बीजों के अंकुरण व बढ़वार में भी उपयोगी है।

कमी के लक्षण

पत्तियों का आकार में छोटा रह जाना निकिल की कमी का प्राथमिक लक्षण है। नई पत्तियां जिनमें निकिल की कमी के लक्षण दिखाई देते हैंए उन पत्तियों में लाल रंग के वर्णक भी दिखाई पड़ते हैं। समय के साथ निकिल की कमी वाली पत्तियां छोटे आकार तथा अधिक गहरे रंग की व मोटी हो जाती हैं ।

मॉलिब्डेनम

यह दलहनी फसलों में जड़ ग्रंथियों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण में मुख्य भूमिका निभाता है । यह पौधे की एंजाइम प्रणाली की क्रिया में होने वाली ऑक्सीकरण अपचयन प्रक्रिया में भी भाग लेता है जो प्रमुख रूप से नाइट्रेट का अमोनिया में अवरण कर कोशिका में प्रोटीन का संश्लेषण करने का कार्य करता है ।

कमी के लक्षण

पत्तियों के किनारे जले हुए से तथा पत्तियां गोल या प्याले के आकार में मुड़ी हुई दिखाई देती है । नींबू वर्गी पौधों में पीला धब्बा रोग तथा फूलगोभी में व्हिपटेल नामक बीमारी होती है

मॉलिब्डेनम प्रबंध

मॉलिब्डेनम की मृदा में कमी पाये जाने की दशा में सोडियम मॉलिब्डेटए अमोनियम मॉलिब्डेट का प्रयोग इस तत्व की कमी को दूर करने हेतु सामान्य स्रोत है। मॉलिब्डेनम की कमी वाली मृदाओं में अनाज की अपेक्षा सब्जियांए दलहनी व तिलहनी फसलें मॉलिब्डेनम के प्रति अधिक सुग्राही हैं। मॉलिब्डेनम की कमीयुक्त अम्लीय लाल मृदाओं में 0.4 से 0.5 कि. ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से इसका प्रयोग पर्याप्त है। पोटाशयुक्त उर्वरकों के साथ सोडियम मॉलिब्डेट या अमोनियम मॉलिब्डेट के मिश्रण का प्रयोग मॉलिब्डेनम प्रयोग क्षमता को बढ़ाने में सहायक होता है।।

सतत कृषि संरक्षण में फसल अवशेष प्रबंधन

किरण हिंगोनिया[1] एवं प्रियंका[2]

परिचय

सतत कृषि का एक अनिवार्य घटक कृषि अपशिष्टों का उचित प्रबंधन है। पौधे के भाग, जैसे डंठल, पत्तियाँ और तने, जो कटाई के बाद खेत में रह जाते हैं, फसल अवशेष कहलाते हैं। फसल अवशेष मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने, कार्बन भंडारण और कटाव को रोकने के लिए आवश्यक है। किसान इन अपशिष्टों को कैसे संभालते हैं, इससे भूमि की उत्पादकता और पारिस्थितिकी तंत्र पर काफी प्रभाव पड़ सकता है। की आवृत्ति और तीव्रता को कम करना द्य फसल अवशेष प्रबंधन दृष्टिकोण का आधार है। इस प्रबंधन रणनीति का उद्देश्य कई अतिरिक्त पारिस्थितिक और वित्तीय लाभ प्रदान करते हुए मिट्टी और पानी की गुणवत्ता को संरक्षित करना है। पौधों के अपशिष्ट का उपयोग खाद, छप्पर, ईंधन, पशु चारा और पैकेजिंग के लिए किया जा सकता है। फसल अवशेष पुनर्चक्रण अपवाह और वाष्पीकरण को कम करके, वे मिट्टी की नमी के संरक्षण में भी सहायता कर सकते हैं। उन क्षेत्रों में जहां पानी सीमित है और सिंचाई की अक्सर आवश्यकता होती है, यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। मिट्टी की रक्षा करता है, कार्बनिक पदार्थों को संरक्षित करता है, और पोषक तत्व चक्र को बढ़ावा देता है, जो सभी टिकाऊ कृषि के महत्वपूर्ण घटक हैं। यह अपशिष्ट को लाभकारी पोषक तत्वों में बदलकर फसलों को भी लाभ पहुंचाता है।

फसल अवशेषों के लाभ–मृदा स्वास्थ्य और उर्वरता:

फसल के अपशिष्टों से मिट्टी के पोषक तत्व और कार्बनिक पदार्थ प्राप्त किए जा सकते हैं। यह मिट्टी के कटाव को सीमित करके, पौधों की वृद्धि के लिए अनुकूल मिट्टी के तापमान को बनाए रखकर, जड़ विकास को प्रोत्साहित करके, मिट्टी का पीएच बढ़ाकर और पौधों के लिए अधिक सूक्ष्म पोषक तत्व उपलब्ध कराकर मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाता है। मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ जोड़ना, मिट्टी का संघनन कम करना, और भूमि की उर्वरता बनाए रखना।

मिट्टी का कटाव कम करना:

मिट्टी की सतह पर अवरोध बनाकर, फसल अवशेष मिट्टी के कटाव को रोकने में सहायता कर सकते हैं। यह विशेष रूप से उन क्षेत्रों में महत्वपूर्ण है जहां उच्च वर्षा या खड़ी ढलान होती है, क्योंकि कटाव एक गंभीर खतरा पैदा कर सकता है। किसान मिट्टी के कटाव को कम करके अपनी भूमि की गुणवत्ता और उत्पादन को संरक्षित कर सकते हैं।

जल संरक्षण:

क्योंकि फसलें बची हुई हैं। अपवाह और वाष्पीकरण को कम करके, वे मिट्टी की नमी के संरक्षण में भी सहायता कर सकते हैं। उन क्षेत्रों में जहां पानी सीमित है और अक्सर सिंचाई की आवश्यकता होती है, यह विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी:

प्रभावी कृषि अवशेष प्रबंधन द्वारा ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने में भी सहायता मिल सकती है। किसान कृषि अपशिष्टों को एकीकृत करके पर्यावरण में उत्सर्जित CO_2 और अन्य गैसों की मात्रा को कम कर सकते हैं। उन्हें जलाने या खुले में सड़ने देने के बजाय मिट्टी में डालें।

पशुधन चारा और जैव ईंधन:

फसल के अवशेष जानवरों के लिए बिस्तर और चारे का एक महत्वपूर्ण स्रोत हैं। इनका उपयोग जैव ईंधन के लिए फीडस्टॉक के रूप में भी किया जा सकता है, जिससे किसानों को अधिक पैसा कमाने में मदद मिल सकती हैं।

खुशहाल माइक्रोबायोम:

बची हुई फसल सहायक बैक्टीरिया और कवक के लिए भोजन और आश्रय प्रदान करती है, जो बदले में मिट्टी में रहने वाले सूक्ष्मजीवों की मदद करती है। इस समृद्ध मृदा माइक्रोबायोटा द्वारा समग्र मृदा स्वास्थ्य और पोषक चक्र को बढ़ाया जाता है।

अधिक पैदावार:

स्वस्थ मिट्टी में पनपने वाले पौधे अधिक मजबूत और फलदायी होते हैं। कम लागतः जब जुताई, शाकनाशी और उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है तो इनपुट लागत कम हो जाती है।

सतत भविष्य: लंबी अवधि के कृषि उत्पादन और पर्यावरणीय लाभ की गारंटी मिट्टी के स्वास्थ्य में वृद्धि और गिरावट से होती हैं।

फसल अवशेष प्रबंधन के तरीके

बिना जुताई वाली खेती:

1. सहायक आचार्य (सस्य विज्ञान), सहायक आचार्य (पादप रोग विज्ञान) कृषि महाविधालय, सुमेरपुर, पाली (कृषि विश्वविधालय जोधपुर)–306902 ईमेल: khingonia@gmail.com

जब कृषि अवशेष जमीन की सतह पर रहते हैं और रोपण के बाद मिट्टी को अछूता रखा जाता है। यह कटाव को कम करता है और मिट्टी की नमी और खनिजों को बनाए रखने की क्षमता में सहायता करता है।

मल्चिंग:

जहां नमी बनाए रखने और खरपतवारों की वृद्धि को रोकने के प्रयास में फसल के अवशेषों को मिट्टी की सतह पर मिलाया जाता हैं।

रिज–टिलेज:

ऊंची मेड़ें या क्यारियां बनाएं ताकि पौधों का बचा हुआ हिस्सा उनके बीच इकट्ठा हो सके। परिणामस्वरूप, मिट्टी का कटाव कम हो जाता है और पानी का प्रवेश बेहतर हो जाता है।

निगमन:

जुताई उपकरण का उपयोग करके, इस दृष्टिकोण से फसल के बचे हिस्से को मिट्टी में शामिल किया जाता है। यह मिट्टी को पोषक तत्व प्रदान कर सकता है और टूटने की प्रक्रिया को तेज करने में सहायता कर सकता है।

चराई:

इस पद्धति का उपयोग करते हुए, पशुधन को फसल के बाद कृषि अवशेषों पर चरने के लिए छोड़ दिया जाता है। जानवरों को चारे की आपूर्ति देने के अलावा,यह खेत पर बचे अवशेषों की मात्रा को कम करने में सहायता कर सकता है। हालाँकि, अत्यधिक चराई मिट्टी की उर्वरता को कमजोर कर सकती है और इसकी संरचना को नुकसान पहुँचा सकती है।

कटाई:

इस विधि में फसल के बचे हुए हिस्से को इकट्ठा किया जाता है और उनका उपयोग जैव ईंधन, बिस्तर या पशु चारा बनाने के लिए किया जाता है। इससे खेत पर बचे अवशेषों की मात्रा कम हो सकती है और किसानों को वैकल्पिक राजस्व स्रोत मिल सकते हैं।

निष्कर्ष:

फसल अवशेष प्रबंधन एक टिकाऊ रणनीति है जो केवल एक प्रवृत्ति से कहीं अधिक हैय यह कृषि भूमि और पारिस्थितिकी तंत्र की पूरी क्षमता को साकार करने की कुंजी है। टिकाऊ कृषि के सबसे महत्वपूर्ण पहलुओं में से एक फसल अवशेष प्रबंधन है। प्रतिकूल पर्यावरणीय प्रभावों को कम करते हुए फसल की पैदावार बढ़ाने वाली तकनीकों को अपनाना कृषि अवशेष प्रबंधन का अंतिम लक्ष्य है। मिट्टी के स्वास्थ्य को बढ़ाने, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने और नवीकरणीय ऊर्जा प्रदान करने के लिए फसल अवशेषों को अच्छी तरह से प्रबंधित किया जा सकता है। कृषि अवशेषों का प्रभावी प्रबंधन किसानों को लाभकारी कीड़ों और सूक्ष्मजीवों का समर्थन करने की अनुमति देता है जो कीटों को नियंत्रित करने और कीटनाशकों की आवश्यकता को कम करने में मदद करते हैं।

लेखक अपने आलेख
dee@raubikaner.org / rajeshvermasct@gmail.com
पर हिन्दी फोन्ट कृतिदेव 10 में वर्ड फाईल व पीडीएफ दोनों में भिजवाने का श्रम करें।

ग्वार के प्रमुख कीट एवं रोकथाम

उदय पाल सिंह[1], डॉ. पी. एस. शेखावत[2], डॉ. भागचंद यादव[3], प्रदीप सिंह शेखावत[4], डॉ. दीपेन्द्र सिंह शेखावत[3] एवं प्रियंका भाटी[5]

ग्वार का वैज्ञानिक नाम सायमोपिसस टेट्रागोनोलोबा है। ग्वार एक प्राचीन व बहुउददेशीय, गहरे जडतंत्र वाली सूखा–प्रतिरोधी दलहनी फसल हैं। इसकी खेती असिंचित व बहुत कम वर्षा वाले क्षेत्रो में सफलतापूर्वक की जा सकती हैं। भारतवर्ष संसार का सबसे महत्वपूर्ण ग्वार उत्पादक देश हैं। इसकी फसल से 25–30 कि. ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर भूमि में उपलब्ध होती हैं। ग्वार का मुख्य रूप से बीज, सब्जी, हरा चारा, हरी खाद एवं ग्वार गम के रूप मे प्रचुरता से उपयोग होता हैं। इसके बीजों में अत्याधिक प्रोटीन (40–45 प्रतिशत) तथा उच्च गुणवत्ता वाला गैलेक्टोमैनन नामक ग्वारगम मिलने के कारण इसको औद्योगिक फसल का दर्जा प्राप्त हैं। ग्वार में अनेक प्रकार के कीटों का प्रकोप होता है। ग्वार पर बड़ी संख्या में एफिड्स, जैसिड्स, सफेद मक्खी, बालों वाली कैटरपिलर, बिहार बालों वाली कैटरपिलर, स्टेम फ्लाई, फली छेदक और बहुत सारे कीटों द्वारा हमला किया जाता है अतरू किसान भाईयों को यह जानना आवश्यक है कि ग्वार में लगने वाले विभिन्न कीटों से हानि किस प्रकार होती है एवं उनका प्रबंधन कैसे किया जाए।

ग्वार के कीट एवं रोकथाम

एफिड (माहू):–

यह एक छोटा, भूरे रंग का कीट है जो पौंधों के कोमल भागो खासकर पत्तियों का रस चूसता है जब ये कीट ज्यादा संख्या में होते है तो ये विकसित कलियों पर आक्रमण करते है। ग्रसित पत्तियां मुड़ जाती है और पौधे कमजोर और रोगी दिखाई देते हैं। ग्रसित फलियों में कमजोर और सिकुड़े हुए बीज बनते हैं। पोषक पौधों की जड़ों को छोड़कर शेष सभी भागों का रस चूसकर हानि पहुंचाते हैं।

रोकथामः–

फसल पर ट्राइजोफॉस 40 ईसी 2.0 मिली/ली, आक्सीडेमेटान मिथाइल 25 ई. सी.या डाइमेथोएट 30 ईसी 1.5 मिली/ली. पानी में घोल बना कर छिड़काव करे।

फली छेदकः–

यह कीट पहले फलियों की उपरी सतेह को खाता है फिर छेद कर फलियों में प्रवेश कर बीजो को खता है। ग्रसित फलियों के दाने खराब हो जाते है। यह फलियों को अधिक नुकसान करता है।

रोकथामः–

क्विनालफॉस 25 ईसी 1.5 मिली प्रति लीटर या प्रोफेनोफॉस 50 ईसी 1.5 मिली प्रति लीटर या इंडक्साकार्ब 1 मिली प्रति लीटर पानी में घोल बना कर पौधों पर छिड़काव कर इस कीटों पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

पत्ती छेदकः–

ग्वार की फसल मे यह सुंडी प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों को खाकर फसल को नुकसान पहुँचती है। इसके बाद जब पौधों में फलियां लगना प्रारंभ होता है तब यह फलियों में छेद कर बीज को खाकर उन्हें क्षतिग्रस्त करती है ?

रोकथामः–

इसकी रोकथाम के लिए क्विनालफॉस 25 ईसी 1.5 मिली प्रति लीटर या प्रोफेनोफॉस 50 ईसी 1.5 मिली प्रति लीटर या डायमिथिएट 30 ईसी 1.0 मिली/ लीटर पानी में घोल का छिड़काव कर कीट पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

रोकथामः–

ग्वार की शीघ्र पकने वाली तथा एफिड रोधी किस्मों का चयन करें। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल 5 मिली 15 ली. या डाइमेथोएट 30 ईसी 1.0 मिली प्रति लीटर में घोल बना कर छिड़काव करें।

लीफ हॉपर (जैसिड):–

ये कीट हरे रंग का होता है इस कीट का निम्फ बिना पंख वाले और पत्तियों की निचली सतेह पर काफी संख्या में पाए जाते है। इसके निम्फ और प्रोढ़ दोनों ही पत्तियों के उत्तको में छेद करते है और रस चूसते है। ग्रसित पत्तियां किनारों से पीली पडना प्रारंभ होती है तथा बाद में पूरी पत्ती पीली पड़कर सूख जाती है और सिकुड़ कर पीछे की ओर मुड़ जाती है। अधिक प्रकोप से ग्रसित पौंधों की बढ़वार रूक जाती है।

रोकथामः–

यदि एक पत्ती पर एक से अधिक निम्फ हों तो इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल 5 मिली/ 15 ली. पानी की दर से छिड़काव करें।

सफेद मक्खीः–

यह रस चूसक कीट है एवं मधु उत्सर्जित करता है जिस पर काली फफूंद विकसित हो जाती है। इस फफूंद के काले धब्बे पत्तियों के निम्न तल पर दिखाई पड़ते हैं। ग्रसित पोधों कि पत्तियां कमजोर और पीली पड़ जाती हैं। पौधे छोटे रह जाते है ।

1. यंग प्रोफेशनल (निदेशालय अनुसंधान, एस.के.आर.ए.यू., बीकानेर), 2. निदेशक अनुसंधान (निदेशालय अनुसंधान,एस.के.आर.ए.यू., बीकानेर) 3. सीनियर रिसर्च फेलो (निदेशालय अनुसंधान, एस.के.आर.ए.यू., बीकानेर) 4. शोधार्थी (पादप रोग विज्ञानं, एस.के.आर.ए.यू., बीकानेर) 5. विद्यावाचस्पति छात्रा, सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर, ईमेलः- udaipalsingh608@gmail.com

मूंग की उन्नत खेती

चेतना शर्मा[1] एवं अमित कुमावत[2]

मूंग ग्रीष्म एवं खरीफ दोनो मौसम की कम समय में पकने वाली एक मुख्य दलहनी फसल है। इसके दाने का प्रयोग मुख्य रूप से दाल के लिये किया जाता है जिसमें 24–26% प्रोटीन,55–60% कार्बोहाइड्रेट एवं 1.3%वसा होता है। दलहनी फसल होने के कारण इसकी जड़ो में गठाने पाई जाती है जो कि वायुमण्डलीय नत्रजन का मृदा में स्थिरीकरण (38–40 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हैक्टयर) एवं फसल की खेत से कटाई उपरांत जड़ो एवं पत्तियो के रूप में प्रति हैक्टयर 1.5टन जैविक पदार्थ भूमि में छोड़ा जाता है जिससे भूमि में जैविक कार्बन का अनुरक्षण होता है एवंमृदा की उर्वराशक्ति बढती है।

भूमि की तैयारी–

खरीफ की फसल हेतु एक गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिए एंव वर्षा प्रारम्भ होते ही 2–3 बार देशी हल या कल्टीवेटर से जुताई कर खरपतवार रहित करने के उपरान्त खेत में पाटा चलाकर समतल करना चाहिए। दीमक से बचाव के लिये क्लोरपायरीफॉस 1.5% चूर्ण 20–25 कि.ग्रा/है. के मान से खेत की तैयारी के समय मिट्टी में मिलाना चाहिये।

किस्म	पकने की अवधि (दिनों में)	औसत उपज (क्विं./हे.)	विशेषतायें
जी एम–4	62–68	10–12	फलिया एक साथ पकती है एवं दाने हरे रंग के तथा बड़े आकर के होते है
आई पी एम 410–3 (शिखा)	65–70	11–12	पीले मोजैक रोग के लिए प्रतिरोधी
आई पी एम 205–7 (विराट)	52–56	10–11	पीले मोजैक रोग के लिए प्रतिरोधी
एस एम एल 1115	65–70	11–12	पीले मोजैक रोग के लिए मध्यम प्रतिरोधी
पूसा 1371	80–90	9–10	पीले मोजैक रोग, जड़ गलन एवं एंथ्रेक्नोज के लिए एकाधिक प्रतिरोधी
जी एम 6	70–75	11–12	पीले मोजैक रोग के प्रति सहनशील
आई पी एम 512–1 (सूर्या)	60–65	12–13	पत्ती धब्बा रोग, एंथ्रेक्नोज एवं पीले मोजैक रोग के लिए प्रतिरोधी
एम एच 1142	60–65	11–12	एंथ्रेक्नोज, फफूंद जनित रोगों के लिए मध्यम प्रतिरोधी
पंत मूंग–8 (पी एम 09–6)	78–83	10–11	पत्ती धब्बा रोग, फफूंद जनित रोग एवं पीले मोजैक रोग के लिए प्रतिरोधी

ग्रीष्मकालीन मूंग की खेती के लिये रबी फसलों के कटने के तुरन्त बाद खेत की तुरन्त जुताई कर 4–5 दिन छोड कर पलेवा करना चाहिए। पलेवा के बाद 2–3 जुताइयाँ देशी हल या कल्टीवेटर से कर पाटा लगाकर खेत को समतल एवं भुरभुरा बनावे। इससे उसमें नमी संरक्षित हो जाती है व बीजों से अच्छा अंकुरण मिलता हैं।

बुआई का समय –

खरीफ मूंग की बुआई का उपयुक्त समय जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई का प्रथम सप्ताह है एवं ग्रीष्मकालीन फसल की 15 मार्च तक बुवाई कर देनी चाहिये। बुवाई में विलम्ब होने पर फूल आते समय तापक्रम वृद्धि के कारण फलियाँ कम बनती हैं अथवा बनती ही नहीं है इससे इसकी उपज प्रभावित होती है।

बीज दर व बीज उपचार–

खरीफ में कतार विधि से बुआई हेतु मूंग 20 कि.ग्रा./है. पर्याप्त होता है। बसंत अथवा ग्रीष्मकालीन बुआई हेतु 25–30 कि.ग्रा/है. बीज की आवश्यकता पड़ती है। बुवाई से पूर्व बीज को कार्बेन्डाजिम + केप्टान (1 + 2) 3 ग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें। तत्पश्चात इस उपचारित बीज को विशेष राईजोबियम कल्चर की 5 ग्राम. मात्रा प्रति किलो बीज की दर से उपचारित कर बुवाई करें।

खाद एवं उर्वरक –

मूंग, उड़द व चंवला के लिए प्रति हैक्टेयर 30–40 किलो फॉस्फेट व

[1]विद्या वाचस्पति छात्रा, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर
[2]सहायक आचार्य, शस्य विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

15–20 किलो नत्रजन बुवाई के समय नायले में बीज से नीचे ऊर देवें। मिट्टी की जांच के आधार पर पोटाश देवें ।

दलहनी फसलों में प्रोटीन की मात्रा बढ़ाने हेतु मृदा जांच के आधार पर बुवाई से पहले आवश्यकतानुसार कैल्सियम व गंधक युक्त उर्वरकों का उपयोग करें। बुवाई से पहले 250 किग्रा जिप्सम या 40 किग्रा. गंधक प्रति हैक्टर उपयोग में लेवें। पत्तियों में पिलापन होने पर फूल आने से पहले 0.1 प्रतिशत गंधक अम्ल के घोल का छिड़काव करें।

सिचाई एवं जल निकास –

प्रायः वर्षा ऋतु में मूंग की फसल को सिंचाई की आवश्यकता नहीं पडती है फिर भी इस मौसम में एक वर्षा के बाद दूसरी वर्षा होने के बीच लम्बा अन्तराल होने पर अथवा नमी की कमी होने पर फलियाँ बनते समय एक हल्की सिंचाई आवश्यक होती है। बसंत एवं ग्रीष्म ऋतु में 10–15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। फसल पकने के 15 दिन पूर्व सिंचाई बंद कर देना चाहिये। वर्षा के मौसम में अधिक वर्षा होने पर अथवा खेत में पानी का भराव होने पर फालतू पानी को खेत से निकालते रहना चाहिये, जिससे मृदा में वायु संचार बना रहता है।

कीट नियंत्रण–

मूंग की फसल में प्रमुख रूप से फली भ्रंग, हरा फुदका, माहू, तथा कम्बल कीट का प्रकोप होता है। पत्ती भक्षक कीटों के नियंत्रण हेतु क्विनालफास की 1.5 लीटर या मोनोक्रोटोफॉस की 750 मि.ली. तथा हरा फुदका, माहू एवं सफेद मक्खी जैसे रस चूसक कीटो के लिए डायमिथोएट 1000 मि.ली. प्रति 600 लीटर पानी या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. प्रति 600 लीटर पानी में 125 मि.ली. दवा के हिसाब से प्रति हेक्टेयरछिड़काव करना लाभप्रद रहता है।

फसल पद्धति–

मूंग कम अवधि में तैयार होने वाली दलहनी फसल हैं जिसे फसल चक्र में सम्मिलित करना लाभदायक रहता है। मक्का–आलू–गेहूँ–मूंग (बसंत), ज्वार+मूंग–गेहूँ , अरहर+मूंग–गेहूँ, मक्का+मूंग–गेहूँ, मूंग–गेहूँ। अरहर की दो कतारों के बीच मूंग की दो कतारे अन्तः फसल के रूप में बोना चाहिये। गन्ने के साथ भी इनकी अन्तरवर्तीय खेती सफलता पूर्वक की जा सकती है।

कटाई एंव गहाई–

मूंग की फसल क्रमशः 65–70 दिन में पक जाती है। अर्थात जुलाई में बोई गई फसल सितम्बर तथा अक्टूबर के प्रथम सप्ताह तक कट जाती है। फरवरी–मार्च में बोई गई फसल मई में तैयार हो जाती है। फलियाँ पक कर हल्के भूरे रंग की अथवा काली होने पर कटाई योग्य हो जाती है। फलियों की तुड़ाई हरे रंग से काला रंग होते ही 2–3 बार में करें एंव बाद में फसल को पौधें के साथ काट लें। हॅसिए से काटकर खेत में एक दिन सुखाने के उपरान्त खलियान में लाकर सुखाते है। सुखाने के उपरान्त डंडें से पीट कर या बैंलों को चलाकर दाना अलग कर लेते है। वर्तमान में मूंग एवं उड़द की थ्रेसिंग हेतु थ्रेसर का उपयोग कर गहाई कार्य किया जा सकता है।

उपज एंव भड़ारण–

मूंग की खेती उन्नत तरीके से करने पर 8–10 क्विंटल/है. औसत उपज प्राप्त की जा सकती है। मिश्रित फसल में 3–5 क्विंटल/है. उपज प्राप्त की जा सकती है। भण्ड़ारण करने से पूर्व दानों को अच्छी तरह धूप में सुखाने के उपरान्त ही जब उसमें नमी की मात्रा 8–10% रहे तभी वह भण्डारण के योग्य रहती है।

पत्रिका में प्रकाशित आलेख/विचार लेखकों के अपने हैं।

अगस्त माह के उद्यानिकी कार्य

डॉ. बलबीर सिंह (वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष)

फल

फलों की रोपाई का कार्य–

फल वाले पौधे लगाने हेतु गत माह के अनुसार फलों की किस्म अनुसार निर्धारित दूरी पर गड्डो में पौध लगावें। गोबर की खाद, उर्वरक एवं कीटनाशक दवाई मिलाकर तैयार गड्डों में नींबू प्रजाति, आंवला, अनार,, बेर आदि के फलदार पौधों की रोपाई करें। ध्यान रखें कि पौधें गड्डे के बीच में सीधा लगावें तथा पौधों को मिट्टी की पिन्डी सहित लगाकर चारों तरफ मिट्टी से अच्छी तरह दबाकर सिंचाई करें रोपाई हेतु फलों की उन्नत किस्मों को ही काम में लेवें।

बेर– बेर में बडिंग का कार्य पूर्ण कर लिया होगा अगर नही किया हो तो बडिंग का कार्य पूर्ण करें। बडिंग करने के 30 से 40 दिन बाद पौधे खेत में रोपण योग्य हो जाते है। पूर्व में बडिंग कार्य के फलस्वरूप निकली फुटान/शाखाओं को कीट/व्याधियों से ग्रसित नहीं होने देवें। थांवलों में भूमि व पौधों पर मिथाइल पैराथियॉन 2 प्रतिशत चूर्ण का भुरकाव करें।

पपीता– जुलाई माह में पपीते की रोपाई नहीं कर पायें हो तो अगस्त माह में जब पपीते की पौध 15–20 सेमी. की हो जाये तो 2 ग 2 मीटर की दूरी पर 45 ग 45 सेन्टीमीटर के तैयार गड्डों में पौध लगावें। प्रत्येक गड्डे में 10 किलो गोबर की खाद, 300 ग्राम सुपर फास्फेट, 50 ग्राम पोटाश, 50 ग्राम क्यूनालफास 1.5 प्रतिशत या एण्डोसल्फान 4 प्रतिशत चूर्ण रोपाई से पूर्व मिलावें। प्रत्येक गड्डे में दो पौधे लगावें। जब पौधों में फूल आवे, उस समय मादा पौधों को खेत में रहने देवें तथा 10 प्रतिशत नर पौधे जो खेत में ठीक तरह से फैले हों, को खेत में छोड़कर शेष नर पौधों को खेत से निकाल देवें। पौधे लगाने के दो माह बाद 25 ग्राम यूरिया, पौधें लगाने के चार माह बाद 35 ग्राम यूरिया तथा फूल आने के पूर्व 50 ग्राम यूरिया देवें।

सब्जियां

टमाटर– खरीफ की फसल में लगाये गये टमाटर में 30 व 50 दिन की फसल में, देशी किस्मों में 30–30 किलोग्राम नत्रजन तथा संकर किस्मों में 50–50 किलोग्राम नत्रजन प्रति हैक्टेयर डालकर सिंचाई करें। शीतकालीन फसल लेने के लिए नर्सरी की तैयारी करें।

मिर्च– तैयार फलों को तोड़कर बाजार में बेचें एवं नियमित देखभाल करें। खरीफ की फसल की रोपाई गत माह में पूर्ण की जा चुकी है। इस माह में मिर्च की फसल में नत्रजन की शेष 35 किग्रा. मात्रा रोपाई के 30 व 50 दिन बाद दो बराबर भागों में बांटकर खड़ी फसल में छिड़क कर देवें तथा सिंचाई करें। आवश्यकतानुसार निराई–गुड़ाई करते रहे।

कुष्माण्ड कुल की सब्जियां– बोई गई फसलों की देखभाल करे। नत्रजन की शेष 60 किलो मात्रा को दो बराबर भाग में बांटकर प्रथम बुवाई के 25–30 दिन बाद तथा दूसरी फूल आते समय देवें तथा सिंचाई करें। फसल की नियमित देखभाल भी करें तथा वर्षा नहीं होने की स्थिति में सिंचाई भी करते रहना चाहिए।

प्याज– खरीफ में बोये गये प्याज की फसल की देखभाल करें तथा रोपाई के एक डेढ़ माह बाद नत्रजन 50 किलों प्रति हैक्टर खड़ी फसल में देवें। आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहे तथा हल्की निराई–गुड़ाई करें।

भिण्डी– भिण्डी की फसल की बुवाई भी गत माह में की गई है। बुवाई के एक माह बाद फसल में

30 किलों नत्रजन प्रति हैक्टर देवें तथा सिंचाई करें। बुवाई के 25–30 दिन बाद निराई–गुड़ाई करें ताकि खरपतवार नहीं पनप पावें।

मूली– पूसा चेतकी व पूसा रश्मि किस्मों की बुवाई इस माह में भी की जा सकती है। मूली की फसल हेतु 250 क्विंटल गोबर की खाद बुवाई पूर्व खेत में मिला देवें तथा बुवाई के एक या दो दिन पहले 20 किलो नत्रजन, 50 किलो फास्फोरस तथा 50 किलो पोटाश प्रति हैक्टर खेत में ऊर देवें। मूली की बुवाई मेड़ों पर करें तथा मेड़ से मेड़ की दूरी 30 से 40 सेन्टीमीटर तथा पौधें से पौधें की दूरी 8–10 सेन्टीमीटर रखें। एक हैक्टेयर बुवाई हेतु 10–12 किलो बीज काम में लेवें। नत्रजन की 25 किलो मात्रा प्रति हैक्टर जड़े बनते समय देकर सिंचाई करें।

बैंगन– बैंगन की शरदकालीन फसल हेतु खेत तैयार कर रोपाई का कार्य करें। रोपाई करने से पूर्व गत माह दर्शाई खाद/उर्वरक एवं रसायन की मात्रा खेत में मिलावें। पौध रोपण के 20 दिन बाद तथा फूल लगने के समय 20–20 किलो नत्रजन छिटकवां विधि से देवें। संकर किस्मों में इन अवस्थाओं पर 30–30 किलो नत्रजन देवें तथा सिंचाई करें। बंसतकालीन फसल के लिए नर्सरी की तैयारी भी करें।

गोभी वर्गीय सब्जियां–

फूल गोभी की बोई गई अगेती किस्मों जैसे अर्ली पटना, अर्ली कुआंरी, पूसा कार्तिकी पूसा दीपाली, पूसा अर्ली सिन्थेटिक आदि की देखभाल करें। आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहे तथा खरपतवार निकालते रहें। पौधे लगाने के एक डेढ़ माह बाद 60–70 किलो नत्रजन खड़ी फसल में देवें तथा सिंचाई करें। मध्य समय वाली किस्मों की रोपाई का कार्य 60 ग 45सेमी. की दूरी पर करें। रोपाई से पूर्व 30 टन गोबर की सड़ी हुई खाद, 75 किलाग्राम नत्रजन, 80 किलोग्राम फॉस्फोरस व 60–80 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टेयर अंतिम जुताई के समय देवें। पिछेती किस्मों की नर्सरी की तैयारी करें। एक हैक्टेयर के लिए 200–300 वर्ग मीटर क्षेत्र नर्सरी के लिए पर्याप्त रहता है।

हरी पत्ती वाली सब्जियां – पालक की बुवाई जून से नवम्बर माह तक की जा सकती है। पालक की उन्नन किस्में पूसा ज्योति, आल ग्रीन, जोबनेर, पूसा हरित की बुवाई करें। पालक का 2.5 से 3. 00 किलो बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त होता है। बीज की बुवाई कतार से कतार 20 सेन्टीमीटर की दूरी परस करें। बुवाई से पूर्व 100 क्विंटल गोबर की खाद 25 किलो नत्रजन तथा 40 किलो पोटाश प्रति हैक्टर देवें। बुवाई के उपरान्त 8–10 दिन के अन्तराल से आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहे तथा जब पौधे 15–20 दिन के हो जाये तो हल्की निराई–गुड़ाई करें एवं खरपतवार निकालते रहें।

फूलों की खेती

बरसात के मौसम में गेंदा, बालसम, जीनिया आदि फूलों की पौध की देखभाल करें व तैयार पौध की रोपाई का कार्य करें। गुलदाऊदी, मोगरा व चमेली की कलमें लगाई जा सकती है। कलमों में जड़ों की शीघ्र फुटान के लिये इण्डोल ब्यूटाइरिक एसिड (आई.ए.ए.) रसायन को 5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोलकर कलमों को आधा मिनट घोल में डुबोकर क्यारियों में लगावें। मोगरा, बेला आदि के फूल को बिक्री हेतु बाजार भेजें और तथा तैयार फूलों को हमेशा सूर्योदय काल में ही तोड़कर बाजार भेजें।

अगस्त माह के कृषि कार्य

डॉ. पी.एस. शेखावत, निदेशक अनुसंधान,
स्वा. के.रा.कृ.वि. बीकानेर

अमेरिकन कपास :

सिंचाई :–सिंचाई 20–25 दिन के अन्तर पर करें। पानी की कमी होने पर सिंचाई एक माह के अन्तर पर भी कर सकते हैं। हाईब्रिड नरमा में बूंद–बूंद सिंचाई पद्धति से सिफारिश किये गये नत्रजन, पोटाश तथा फास्फोरस की मात्रा 6 बराबर भागों में दो सप्ताह के अन्तराल पर ड्रिप संयंत्र द्वारा देने से सतही सिंचाई की तुलना में ज्यादा उपयुक्त होती है। वर्षा होने पर वर्षा की मात्रा के अनुसार सिंचाई उचित समय के लिये बन्द कर दें। पानी एक दिन के अन्तराल पर लगावें। **निराई–गुडाई** :– सिंचाई के बाद बत्तर आने पर त्रिफाली चला कर निराई–गुड़ाई करें तथा खेत में खरपतवार न पनपनें दें। **देशी कपास : सिंचाई** :–25–30 दिन के अन्तर पर सिंचाई करें।

धान

सिंचाई :–धान में कुल 125 से.मी. के लगभग सिंचाई के पानी की आवश्यकता होती है। धान की रोपाई के बाद खेत में 4 से 5 से.मी. पानी खड़ा रहे, इसलिए समय–समय पर सिंचाई करते रहना चाहिए। फसल में बालियाँ निकलने के समय से लेकर दाना पड़ने तक खेत में पानी भरा रहना चाहिए। इन अवस्थाओं में पानी की कमी से उपज में कमी आ जाती है। **उर्वरक** :–10 किलो नत्रजन प्रति बीघा (22 किलो यूरिया) रोपाई के 3 से 4 सप्ताह बाद तथा 10 किलो नत्रजन प्रति बीघा (22 किलो यूरिया) 6 से 7 सप्ताह बाद खड़ी फसल में टॉप ड्रेसिंग करें।

गन्ना:–

सिंचाई :–वर्षा न होने की स्थिति में 10–15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करें। **गन्ने में बून्द–बून्द सिंचाई**:–बुवाई के एक महीने बाद बून्द–बून्द सिंचाई शुरू कर देवें। वर्षा होने पर वर्षा की मात्रा के आधार पर बून्द–बून्द सिंचाई बन्द कर देवें। सिंचाई जल निम्न सारणी के अनुसार एक दिन के अन्तराल पर लगावें। बून्द–बून्द सिंचाई पद्धति द्वारा ही नत्रजन एवं पोटाश उर्वरक दे। 40 किलोग्राम फास्फेट प्रति हैक्टर बुवाई के समय कूड़ में देवें। बून्द–बून्द सिंचाई द्वारा उर्वरक सिंचन (फर्टीगेशन) के लिए सिफारिश की गई नत्रजन एवं पोटॉश की 75 प्रतिशत मात्रा पर्याप्त है। 112.5 किलोग्राम नत्रजन एवं 30 किलोग्राम पोटाश प्रति हैक्टर को 9 बराबर भागों में 3 सप्ताह के अन्तराल पर बून्द–बून्द सिंचाई पद्धति द्वारा फसल को दें। **निराई–गुडाई** :– गन्ने में जड़ो के आस–पास मिट्टी चढ़ा देनी चाहिये।

मूंगफली :

सिंचाई :–दूसरी सिंचाई अगस्त के प्रथम पखवाड़े में करें। फूल आने पर, सुईयाँ बनने तथा फली के बनने के समय भूमि में नमी का होना आवश्यक है। **फव्वारा सिंचाई**: मूँगफली की फसल में फव्वारा सिंचाई विधि से सिंचाई हेतु नोजल से नोजल की दूरी 12 मीटर तथा लाईन से लाईन की दूरी 12 मीटर पर रखकर 2.5 किग्रा प्रति वर्ग से.मी. पानी के दबाव पर सिंचाई करें। इस फसल में 60 मिमी. प्रति सिंचाई पानी लगाने पर 5 सिचाईयाँ (बुवाई के 24, 48, 70, 91 एवं 112 दिन बाद) उपयुक्त पाई गयी तथा 50 मिमी प्रति सिंचाई पानी लगाने पर 7 सिचाईयाँ (बुवाई के 25, 40, 54, 68, 82, 95 एवं 108 दिन बाद) उपयुक्त पाई गयी। **निराई–गुडाई** :– आवश्यकता हो तो दूसरी निराई गुड़ाई यथा शीघ्र पूरी कर दें। **खरपतवार नियंत्रण**: रेतीली मृदाओं में जहां मूँगफली में भूरट खरपतवार की समस्या हो, वहां पेन्डीमेथालीन (30 ई.सी.) की 175 ग्राम मात्रा का प्रयोग बुवाई के दो दिन बाद। या खरपतवार नियंत्रण के लिए इमेजाथाइपर (10% SL) दवा की 10 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति बीघा की दर से 100 से 125 लीटर पानी में डालकर बुवाई के 30–35 दिन बाद छिड़काव करें। जिस खेत में यह रसायन प्रयोग में लाया गया है वहां सरसों की अंकुरण क्षमता प्रभावित हो सकती है। इसके बाद सरसों की बुवाई अगर करनी हो तो बीज की मात्रा ज्यादा डालें।

ग्वार :–

सिंचाई :–बोने के तीन या चार सप्ताह बाद अच्छी वर्षा न हो तो सिंचाई करनी चाहिए। दूसरी सिंचाई वर्षा समाप्त होने पर माह अगस्त या सितम्बर में करना आवश्यक है। यदि ग्वार के बाद रबी की फसल लेनी हो तो 15 सितम्बर के बाद सिंचाई नहीं करें, क्योंकि इसके बाद सिंचाई करने में फसल पकने में विलम्ब हो जाता है। **निराई–गुड़ाई** :–यदि खेत में खरपतवार हो तो निराई–गुड़ाई करना आवश्यक है। यह क्रिया फसल की एक माह की अवस्था से पूर्व सम्पन्न कर देना चाहिए।खरपतवार नियंत्रण के लिए इमेजाथाइपर 10 % SL दवा की 10 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति बीघा की दर से 100 से 125 लीटर पानी में डालकर बुवाई के 30–35 दिन बाद छिड़काव करें।

बाजरा :–

उर्वरक :– बुवाई के 25–30 दिन बाद, वर्षा वाले दिन या सिंचाई होने पर नत्रजन की आधी मात्रा देंवे। अगर इस समय वर्षा या सिंचाई न हो तो उर्वरक न देवें। **निराई–गुड़ाई** :–पहली निराई–गुड़ाई जब फसल 3 से 4 सप्ताह की हो जाये तब हल चलाकर करें।

तिल :–

सिंचाई :– यदि वर्षा न हो तो बुवाई के 25–30 दिन बाद सिंचाई करें। **उर्वरक** :–5 से 6 किलो यूरिया प्रति बीघा बुवाई के 30 दिन बाद खड़ी फसल में छिडक कर दें।

अरण्डी :–

सिंचाई :– प्रथम सिंचाई बुवाई के 40 दिन बाद वर्षा न होने पर देवें **उर्वरक** :– नत्रजन की आधी मात्रा (11 किलो यूरिया) प्रथम सिंचाई पर दें।

मूंग/मोठ :–

सिंचाई :– यदि समय पर वर्षा न हो तो सिंचाई आवश्य करें। **निराई–गुड़ाई** :–फसल में आवश्यकतानुसार खरपतवार निकालते रहिये। 30 दिन की फसल होने पर निराई – गुड़ाई

अवश्य कर देनी चाहिए। मूंग में खरपतवार नियंत्रण के लिए फसल बुवाई के 25–30 दिन की अवस्था पर रासायनिक विधि से एसीफ्लुरफेन 24 एस.सी. (बलैजर) 500 ग्राम खरपतवारनाशी को 150 लीटर पानी प्रति बीघा की दर से एक समान छिड़काव करें।या इमेजाथाइपर 10% एस.एल. दवा की 10 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति बीघा की दर से 100 से 125 लीटर पानी में डालकर बुवाई के 30–35 दिन बाद छिड़काव करें।

कीट नियंत्रण

अमेरिकन कपास :–इस माह फसल पर रस चूसने वाले कीट जैसे हरा तेला, सफेद मक्खी के प्रकोप की संभावना रहती है। साथ ही चितकबरी लट का भी प्रकोप हो सकता है। इसलिए किसान भाई प्रतिदिन सुबह अपने खेत का निरीक्षण करें कि इन में से कोई कीट अपने आर्थिक नुकसान स्तर को पार नहीं कर पाये।

देशी कपास:–देशी कपास में चितकबरी लट का प्रकोप हो सकता है इसके आर्थिक नुकसान स्तर को खेत में फेरोमेन ट्रेप लगाकर मालूम किया जा सकता है। आर्थिक नुकसान स्तर पार करने पर क्युनालफॉस 20 ई.सी. 20 मिली प्रति लीटर या फेनवेलरेट 20 ई.सी. 1 मिली या इन्डोक्साकार्ब 1 मिली या स्पाइनोसैड 45 एस.सी. 0.33 मिली या इमामेक्टीन बैंजोएट 5 एस. जी. 0.5 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

कपास / नरमा की फसल को मिली बग के प्रकोप से बचाने हेतु खेत के आस–पास उगे खरपतवारों को नश्ट कर दें। यदि अधिक प्रकोप हो तो थायोडिकार्ब 75 डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम या प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी. 2.00 मिली /लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर एक पुनः छिड़काव करें।

गन्ना:–गन्ने की फसल में तना छेदक का प्रकोप दिखाई देने पर फोरेट 10 जी.कण 4 किलो प्रति बीघा की दर से डाले। पाइरिला का प्रकोप होने पर मैलाथियान 50 ई.सी. 300 मिली या डाइमिथोएट 30 ई.सी. 250 मिली प्रति बीघा या थायोमेथोक्जाम 25 डब्ल्यू.जी. 0.50 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

ग्वार:–ग्वार की फसल में हरा तेला, सफेद मक्खी व चैंपा के प्रकोप से बचने के लिए डाईमिथोऐट 30 ई.सी. एक लीटर प्रति हैक्टर के हिसाब से या थायोमेथोक्जाम 25 डब्ल्यू.जी. 0.50 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर छिड़काव करें।

मूंग:– मूंग की फसल में मोयला, सफेद मक्खी व हरा तेले के प्रकोप के बचाव के लिए डाइमिथोएट 30 ई.सी. या ट्राईजोफॉस 40 ई.सी. का 250 मिली प्रति बीघा की दर से छिड़काव करें या मैलाथियान 5 प्रतिशत चुर्ण का 6 किलो बीघा की दर से भुरकाव करें। फली छेदक के नियन्त्रण के लिए क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 250 मिली को प्रति बिघा की दर से छिड़काव करें।

बाजरा :–बाजरे की फसल में दीमक व सफेद लट के प्रकोप से बचने के लिए क्लोरोपाईरीफॉस 20 ई.सी. 4 लीटर प्रति हैक्टर की दर से सिंचाई के पानी के साथ देवें। कातरा के नियन्त्रण के लिए क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चुर्ण का 6 किलो बीघा की दर से भुरकाव करें एक लीटर दवा को 600 लीटर पानी में घोलकर प्रति हैक्टयर की दर से छिड़काव करें।

तिल :–तिल की फसल में पत्ती लपेटने वाली लट के नियंत्रण के लिए क्यूनालफॉस 25 ई.सी. एक लीटर प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करें।

रोग नियंत्रण

अमेरिकन कपास : शाकाणु–झुलसा रोग : रोग के प्रकोप को देखते हुए रोग नियंत्रण के लिए निम्न दवाओं का घोल 100 लीटर पानी की दर से बनाकर छिड़काव करें। **(अ)** स्ट्रेप्टोसाइक्लिन : 5–10 ग्राम या प्लांटोमाइसिन : 50–100 ग्राम (आ)कॉपर ऑक्सीक्लोराइड–250–300 ग्राम। **पत्ता मरोड़ रोग (लीफ कर्ल)** :–पत्ता मरोड रोग का प्रकोप चल रहा है। रोग को फैलाने वाली सफेद मक्खियों के नियंत्रण के लिए सिफारिश की गई कीटनाशी दवाओं का छिड़काव करें। खेत व खेत के चारों और सड़क या कैनाल के दोनों तरफ उपस्थित खरपतवारों (पीली बूटी, कंगी बूटी, भांग, भिण्डी, भाखड़ी आदि) को समय–समय पर साफ करते रहे। **देशी कपास : जड़गलन** –जड़गलन रोग से प्रभावित पौधों को जड़ सहित निकाल कर जला दें।

मूंगफली : टिक्का रोग : पत्तियों पर भूरे–काले धब्बे दिखाई पडनें पर कार्बोन्डिजिम 50 डब्ल्यू.पी. 0.1 प्रतिशत अथवा मैन्कोजेब 0.2 प्रतिशत अथवा हैक्जाकोनाजोल 5ई.सी. 1 मिली प्रति लीटर की दर से छिड़काव करना चाहिए। **कॉलर रोट** : खडी फसल में सन्धि विगलन रोग (कॉलर रोट): रोकथाम के लिए प्रोपीकोनाजाल (25 ईसी) या हेक्जाकोनाजोल (5 ईसी) 1.5 मि.ली. प्रति लीटर पानी का मृदा निक्षेप अथवा सिचाई पानी के साथ 200 मि.ली. प्रति बीधा की दर से देवें।

मूंग : शाकाणु चित्ती रोग : मूंग की वर्शाकाल में ली जाने वाली फसल में रोग के छोटे–छोटे गहरे भूरे रंग के धब्बे पत्तियों, फलियों एवं तनो आदि पर दिखाई पड़ने पर स्ट्रेप्टोसाइक्लीन 5 ग्राम तथा कॉपर आक्सीक्लोराइड 300 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी के घोल बना कर प्रति बीघा की दर से छिड़काव करना चाहिए।

ग्वार : जीवाणु झुलसा रोग : इस रोग की रोकथाम के लिये खड़ी फसल में 100 लीटर पानी में स्ट्रेप्टोसाइक्लीन 20 ग्राम व कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50 डब्ल्यू पी 200 ग्राम के हिसाब से घोल बनाकर 15 दिन के अन्तराल पर दो छिड़काव करें। झुलसा रोग की रोकथाम हेतु जाईनेब या मैन्कोजेब का 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें।

तिल : फिलोडी रोग : इस रोग के नियत्रण के लिए थायोमिथोक्जाम 0.25 ग्राम प्रति लिटर की दर से प्रथम छिड़काव 45 दिन व दूसरा छिड़काव 60 दिन की फसल अवस्था पर करें एवं स्ट्रेप्टोसाइक्लीन 150 पीपीएम तथा कॉपर आक्सीक्लोराइड 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से तीसरा छिड़काव 70 दिन फसल अवस्था पर करें।

Printed and published by Prof. Subhash Chandra on behalf of Nidesak Prasar Shiksha and Printed at M/s Kishan Enterprises, Magaram Colony, Outside Jassusar Gate, Bikaner and published at Swami Keshwanand Rajasthan Agricultural University, Bikaner, Editor : Prof. Rajesh Kumar Verma.